PUNE RESEARCH WORLD ISSN 2455-359X
AN INTERNATIONAL JOURNAL OF INTERDISCIPLINARY STUDIES VOL 5, ISSUE 3

यात्रा . साहित्य की ऐतिहासिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमी

डॉ संध्या शर्मा

एसोसिएट प्रोफेसर
आचार्य नरेन्द्र देव नगर निगम
महिला महाविद्यालय, कानपुर
(उ प्र.) भारत

संस्कृति इतिहास की जन्मदात्री है और इतिहास संस्कृति का पोषक। इतिहास , और संस्कृति एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। साहित्यकार अपने समाज संस्था या संस्कृति के ऐतिहासिक पक्ष से अपने आपको अछूता नहीं रख सकता, भले ही वह नितान्त वैयक्तिक साहित्य की रचना ही क्यों न करें। साहित्यकार जिस समाज में रहता है, उसके मानवीय अन्तः क्रियात्मक प्रक्रियाओं को, जिनके फलस्वरुप किन्हीं संस्था या सांस्कृतिक तत्व का विकास हुआ है, उससे तादात्म्य स्थापित करके ही रचना करता है। यायावर रचनाकार चूँकि एक मनुष्य ही है और मनुष्य अपने जीवन को सामाजिक धरातल पर ही जीता है वैयक्तिक स्तर पर भोगता है। जिस युग और समाज में संयोगवश वह पैदा हो गया है, उसे युग और समाज की विभिन्न संस्थाएँ उसके जीवन को पग–पग पर नियमित और परिचालित करती है, उसके जीवन को एक विशिष्ट रुपाकार में सजाती है। उसके व्यक्तित्व को एक विशिष्ट साँचे में ढालती हैं। यह उसके जीवन का सामाजिक धरातल है। इस धरातल पर जाते हुए ही, यायावर रचनाकार ऐतिहासिक स्थलों, नगरों, एवं पुरातात्विक सन्दर्भो से जुड़ता है और यात्रित प्रदेश का इतिहास जानने की चेष्टा करता है।

यात्रा–साहित्य लेखक के मन में वर्तमान के साथ अतीत भी प्रतिघटित होने लगता है। यात्री अपने दर्ण्य विषय को उसकी सम्पूर्णता में ग्रहण करता है। यही कारण है कि उच्चकोटि के यात्रा–साहित्य में दृश्य–सौन्दर्य जीवन का रुप इतिहास पुरातत्व, अर्थनीति, राजनीति सब मिलकर एक रस हो जाते हैं। कुछ यात्रा लेखकों ने तो विशुद्ध रुप से ऐतिहासिक और पुरातात्विक अन्वेषण हेतु ही यात्राएँ की हैं। उनके यात्रा वृत्तों में ऐतिहासिक

शोधपरक दृष्टि उपलब्ध होती है। यात्रा लेखकों द्वारा विभिन्न स्थलों के ऐतिहासिक महत्व का प्रतिपादन वहाँ के सांस्कृतिक जीवन की झाँकी प्रस्तुत करता है। .

राहुल जी द्वारा प्रस्तुत राजस्थान के चित्तौड़ नगर के सूर्य मन्दिर का ऐतिहासिक वर्णन देखिए –

"सूर्य मंदिर मूर्तिकला के उत्कर्ष के समय बना था। यह वहाँ पर मौजूद भव्य प्रतिमाएँ बतला रही थीं। ग्वालियर किले में श्वते हूण राजा तोरमाड़ ने सूर्य का सुन्दर

मन्दिर बनवाया था। इस सूर्य मन्दिर के बारे में यह कहना मुश्किल है कि 5वीं शदी में बना होगा। कुछ भी हो, भारत की सूर्य मूर्तियों और सूर्य मन्दिरों के बनवाने में शंकों और

हुणों का प्रथम हाथ लगा, इसमें सन्देह नहीं। इस मन्दिर के द्वार पर मकर पर आरुढ़ गंगा और कूर्म पर आरुढ़ जमुना की मूर्तियाँ हैं। सूर्य मूर्तियाँ चारो ओर दिखाई पड़ती हैं, जो आठवीं–नवीं शताब्दी के इधर की नहीं हो सकती।''2 ––– चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के काल में निर्मित उदयगिरि की वाराह मूर्ति का उन्हीं के द्वारा किया गया ऐतिहासिक वर्णन गुप्तकालीन भारत की संस्कृति को बताता है। इसी प्रकार केदारनाथ यात्रा में सिर कटे गणेश की मूर्ति को देखकर उन्हें रुहेलों के अत्याचारों की स्मृति हो उठती है। तक्षशिला के प्राचीन ऐतिहासिक स्तूपों के वर्णन में अज्ञेय ने भी सम्राट अशोक–कालीन भारत का ऐतिहासिक चित्र खींचने का प्रयास किया है। एक उदाहरण देखिए –

"तक्षशिला की दूसरी बसाई अवशेष तामड़ा नाले के पार सिरकाय स्थान में है, और तीसरी के कुछ उत्तर पूर्व को सिरमुख में। पहली बस्ती ई0 पू0 500–600 की .. होगी, दूसरी कदाचित बारित्रयों द्वारा निर्मित हुई थी और पीछे शकों के हाथ पड़ी। तीसरी नगरी कुषाण सम्राट कनिष्क की बसाई हुई थी और कई सौ वर्षों तक आबाद रही। वानच्वाड. जिस तक्षशिला में आया वह यही थी, और उसने जिन स्थलों का वर्णन किया. है उनकी दूरी संकेत यहीं से हैं। धर्म राजिक स्तूत ("चीर टोपा" क्योंकि पहली खुदाइयों में उसे चीर दिया गया था) कदाचित् अशोक के समय निर्मित हुआ था और पीछे उसके आस–पास अन्य स्तूप और बिहारों का निर्माण हुआ। विभिन्न खण्ड अलग अलग समय पर बने, और सब की निर्माण शैली अलग अलग है। टोपे के उत्तरी भाग में बुद्ध की एक विराट मूर्ति के केवल पैर अवशिष्ट हैं जो पूरी लगभग बीस हाथ की रही होगी।

कश्मीरी इतिहास एवं राजनीति :–

यात्रा साहित्य में भारत के कश्मीर क्षेत्र के इतिहास पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। भारत के उत्तरांचल में स्थित कश्मीर एक प्राचीनतम क्षेत्र है। महाभारत के समय के पूर्व

काश्मीर में आदि गोनर्द नामक राजा राज्य करता था। यह राजा जरासंघ का समकालीन था। जब जरासंध ने मथुरा पर चढ़ाई की तो यह भी यदुवंशियों से लड़ने साथ गया था। बलराम जी के द्वारा इसे वीरगति प्राप्ति हुई थी। गोनार्द का पुत्र दामोदर राज्यासीन हुआ। पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए दामोदर ने, गन्धार–राजकन्या के स्वयंवर जहाँ यादव भी आमन्त्रित थे, ससैन्य आक्रमण किया था। इसे भी वहाँ वीरगति प्राप्त हुई थी। तब उसकी सगर्भा रानी यशवती को राज्यासन दिया गया था। यशवती को अबला मानकर मंत्रि–वर्ग स्वच्छन्द हो गया था, पर श्रीकृष्ण के समझाने पर रानी को माता तुल्य माना। यशवती का पुत्र "बालगोनर्द" बाल काल में ही सिंहासनारुढ़ हुआ। महाभारत युद्ध में वह भी मारा गया। महाभारत युद्ध के पश्चात् पाण्डव वंशी 35 राजाओं ने काश्मीर पर शासन किया। इसके तुरन्त बाद "लव" राजा हुआ। यह प्रवीण योद्धा एवं कुशल शासक था। इस राजवंश का अन्तिम राजा सुरेन्द्र, निसंतान मरा। अतः नये राजवंश ने काश्मीर पर शासन किया। इस नये वंश में गोधर, सुवर्ण जनक, शनीचर, राज्य के बाद शनीचर का भतीजा "अशोक" राज्य का अधिकारी हुआ। इसने जैन धर्म की दीक्षा ली और विवस्ता–तट पर स्तूपादि का निर्माण करवाया। अशोक का पुत्र जलोक पिता से भी अधिक पराक्रमी और प्रतापी था। उस समय यवनों की संख्या में वृद्धि हो रही थी। इसने यवन राजा यूथिदेयुस को हराया व अंति ओकस से संधि की। इस वंश का अन्तिम राजा दामोदर था इसके शासन काल में शैवमत का सर्वाधिक प्रचार हुआ। इसके बाद हुष्क, जुष्क और कनिष्क तीन तुरुषक राजाओं का काश्मीर पर अधिकार रहा। कनिष्क सबसे प्रसिद्ध राजा था। यह बौद्ध–धर्म का अनुयायी था। इसका राज्य उत्तरी भारत में दूर तक फैला हुआ था, इसकी राजधानी पुरुषपुर अथवा पेशावर थी। इसके प्रताप की प्रसिद्धि भारत के बाहर चीन, तिब्बत, मंगोलिया आदि देशों में फैली। कनिष्क का राज्य उत्तरी भारत में दूर–दूर तक फैला हुआ था। प्रसिद्धि वैध "चरक" कनिष्क काल के थे। तुरुष्कों के पीछे अभिमन्यु ने नये राजवंश का राज्य चलाया। बॉदों के प्रावल्य से असंतुष्ट कवि कल्हण लिखते हैं –

"कर्मकाण्ड के लोप होने से नागों ने बरफ की महावृष्टि से मनुष्यों का नाश प्रारम्भ कर दिया। पर आश्चर्य की बात यह थी कि उस प्रकोप के शिकार केवल बौद्ध ही होते थे।

इसी वंश का राजा मिहिरकुल, क्रूर अत्याचारी था। केवल इस बात पर कि उसकी रानी के सिंहलदीप का बना वस्त्र धारण किया, जिस पर वहाँ के राजा के पदचिन्ह अंकित थे, क्रोधित हो घोर संग्राम किया। उसकी नृशंसता और भी भयावह थी।

"एक दिन एक हाथी आकस्मिक पहाड़ से लुढ़कर कर चीत्कार करता हुआ. गिरा और मर गया। उसे देखकर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने उसी प्रकार और सौ हाथियों को गिरवा कर अपना शौक पूरा किया।"

इस वंश का अन्तिम राजा अंध युधिष्ठिर था। यह राज्य छोड़कर भाग गया। इसके बाद मालवे के राजा प्रतापादित्य ने काश्मीर को अपने आधीन कर लिया। इसके वंश ने बहुत दिनों तक काश्मीर पर शासन किया। इस वंश का अन्तिम राजा तुज्जीन था। यह बहुत दयालु एवं धर्मात्मा था। इसके शासनकाल में भारी दुर्भिक्ष पड़ा। राजा ने प्रजा के कष्ट को अपना कष्ट समझ कर प्रजा की सब प्रकार से सेवा की। तब संचित धन दीन–दुखियों को बॉट दिया।

इसके बाद हिरण्य तथा फिर विक्रमादित्य के भेजे गये मातृगुप्त ने काश्मीर का शासन किया। उसके बाद पुरवाहन के पुत्र प्रवरसेन ने श्रीनगर को पुनः बसाकर राज्य किया। प्रवरसेन ने ही झेलम पर नावों का पुल बाँधा था। यह शैव मत का अनुगामी था। वंश का अन्तिम राजाबालादित्य था।

बालादित्य के बाद कर्कोटक–वंश के प्रथम राजा दुर्लभवर्द्धन ने काश्मीर पर शासन किया। इसने राज्य का विस्तार किया। इसके राज्य में प्रजा शान्ति व सुख से रहती थी। दुर्लभवर्द्धन का पोता ललितादित्य सम्वत् 790 में राज्याशन पर बैठा। 36 वर्ष तक शासन किया। मार्तण्ड मन्दिर का निर्माण उसी काल में हुआ। कन्नौज, बंगाल और नेपाल जीता। प्रजा पर अत्याचार भी अधिक किये। इसके उपरान्त उत्पलवंश के बारह राजाओं ने संवत् 913 से 1060 तक काश्मीर पर राज्य किया। इस वंश का प्रथम राजा अवन्ति वर्मा विधानुरागी था। झेलम से नहरों का निर्माण उसी शासन काल में हुआ। खेती की सिंचाई का सुभीता हो गया। इसके बाद "पार्थ" राजा हुआ जो क्रूर था, अपने पिता को ही मार डाला। उत्पलवंश के बाद लोहरवंश ने 125 वर्ष तक शासन किया। इन राजाओं में से अधिकांश ने प्रजा को प्रताड़ित किया।

दसवीं शताब्दी में विद्दा रानी ने काश्मीर पर शासन किया। यह बड़ी दुश्चरित्रा थी। 50 वर्षों तक काश्मीर की प्रजा को अत्याचारों से व्याकुल और पीड़ित रखा। इसके उत्तराधिकारी राजा संग्राम के समय में लुटेरे, महमूद गजनवी ने काश्मीर पर चढ़ाई की। अन्न–जल के अभाव में गजनवी को भागना पड़ा। 1185 से 1396 तक लोहर वंश की एक छोटी शाखा ने काश्मीर पर शासन किया। अन्तिम शासिका कोटा रानी को हराकर। मुसलमानों ने काश्मीर पर अधिकार कर लिया।

सम्वत् 1396 से काश्मीर पर मुसलमानों का शासन शुरु हुआ। शाहमीर के समय शासन व्यवस्था ब्राह्मणों के हाथ में रही, व्यवस्था में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। छोटे–छोटे शासकों के आधीन, काश्मीर में अनेक गृह युद्ध निरन्तर होते रहते थे। . जैन–उल–आब्दीन ने सम्वत् 1477 से 1527 तक शासन किया। किसानों का परम हितैषी था। वह उन्नति

विचारों का उदार शासक था। ब्राह्मणों से भी प्रेम था। उन पर लगाये गये अनुचित कर माफ, कर दिये और जगह–जमीन देकर वह उन्हें उत्साहित करता था। यह धर्मनिरपेक्ष था कुछ हिन्दू मन्दिर भी बनवाये थे। वह संस्कृति–साहित्य को भी उत्तेजन देता रहा था। काश्मीर की आर्थिक उन्नति के लिए उसने बाहर से बहुत से कला, कुशल कारीगर बुलवाये थे। दरबार में कवि, गायकों का मेला लगा रहता था काश्मीर इस समय में सुखी एवं खुशहाल था इसके बाद काश्मीर को दुर्दिन देखने पड़े। 1589 तक शासनाधिकार अयोग्य हाथों में रहा।

विदेशी आक्रमणकारी मिरजा हैदर ने काश्मीर को जीतकर कुछ समय तक शासन किया। इसके उपरान्त छोटे–छोटे शासक रहे। काश्मीर सम्वत् 1643 में मुकुल सम्राट। अकबर के अधिकार में आ गया। एक सूबेदार काश्मीर में रहता था। स्वयं अकबर ने तीन बार काश्मीर की यात्रा की थी। इसके शासन में काश्मीर सुखी और समृद्ध था। अकबर ने हरिपर्वत का परकोटा बनवाया था। इसके शासन काल के बाद इसका पुत्र जहाँगीर काश्मीर का राजा बना। जहाँगीर के समय में काश्मीर में शान्त एवं सम्पन्नता थी। जहाँगीर काश्मीर का बड़ा प्रेमी था। प्रजा के दिन बहुत शान्त और सुख से बीते जहाँगीर काश्मीर के बारे में कहा करता था कि

"अगर फिर दौस बररुए जमी अस्त।

हमी अस्तो हमी अस्तो हमी अस्त।।"[1]

अर्थात् मृत्यु लोक में कोई स्वर्ग है तो काश्मीर है, काश्मीर है, काश्मीर है। जहाँगीर ने काश्मीर को सुन्दर–सुन्दर उद्यानों से सुसज्जित करवाया था। साम्राज्ञी नूरजहाँ भी काश्मीर को तहेदिल से चाहती थी। काश्मीर की सम्पन्नता के लिये उसने भी बहत से कार्य किये। जहाँगीर प्रजा की जानमाल की रक्षा के लिये तत्पर रहता था। जहाँगीर के पुत्र औरंगजेब के शासन काल में हिंदू पूजा के अत्याचार सहने पड़े। "बरनियर–यायावर ने औरंगजेब शासन में काश्मीर के बारे में लिखा है कि –

"भारत वर्ष के अन्य प्रान्तों की अपेक्षा काश्मीर में विद्या–बुद्धि का अधिक प्रचार .: है। साहित्य और विद्वान में वे उन्नत हैं, कला–कौशल में भी किसी से कम नहीं। उसने

लिखा है कि काश्मीर भारत का स्वर्ग है। सारा प्रान्त एक उपजाऊ और सुशोभित उद्यान के समान है। स्थान–स्थान पर वृक्षों के झुरमुटों में झोपड़ियाँ, छोटे–छोटे गाँव बसे हुए है। चारागाह, अंगूर की बेलें, चावल और गेहूँ के खेत ही नहीं, पर केसर के खेत, विविध प्रकार

के फल–फूल, पानी से भरी हुई नहरें, नदी–नाले, झील आदि के दृश्य बड़े आकर्षक हैं। काश्मीरी सब प्रकार से सुख भोगते हैं।"[2]

औरंगजेब के बाद मुगल शासन का विनाश हुआ। सूबेदार स्वतन्त्र होकर अत्याचारी हो गये। जो मुसलमान थे। जबरदस्ती मुसलमान बनाये जाते थे। हिन्दुओं के सिर तो उनके लिये फूल के समान थे। जब सिर काटते–काटते थक गये तो बोरों में भरकर जिंदा डल झील में डुबो दिये जाते थे। इस हत्या काण्ड से झील का तट अब भी "बतामजीर" के नाम से मशहूर है। हिन्दू स्त्रियाँ भी प्रताड़ित हो जाती थीं। सम्वत् 1807 में शासन अफगानों के हाथ में आया। हिन्दू स्त्रियाँ अफगानों की लौडिया बनाई जाती थीं। उनका अपमान किया जाता था। काश्मीर के संस्कृत साहित्य को नष्ट कर दिया गया। पीड़ित काश्मीर–वासियों ने तत्काल राजा रणजीत सिंह से सहायता मॉगी। दूसरे प्रयास में वे सफल हुये। सिक्खों के शासनकाल में कर अधिक लगाये गये। रणजीत सिंह की मृत्यु के उपरान्त काश्मीर में बलवे, दंगे हुए। गुलाब सिंह ने हर दंगों को शमन किया व वही राजा भी हुआ। राजा मुलाबसिंह डोगरा राजपूत थे।

अंग्रेजों ने सिक्खों को पराजित किया। चूंकि पंजाब और काश्मीर को संभालने की शक्ति अंग्रेजों में नहीं थी, धन की उन्हें आवश्यकता थी, अतः उन्होनें काश्मीर 75 लाख 'रुपये में गुलाबसिंह को बेच दिया। गुलाबसिंह के बाद रणवीर सिंह शासक हुये। काश्मीर शासन का वर्णन अंग्रेज इतिहासकारों ने किया है कि –

"घी, दूध, अन्न, फल बहुत ही सस्ते थे। शिक्षा–दीक्षा में काश्मीर उन्नत था। अपराधों का नाम भी न था।.....पर यह अवस्था थोड़े ही दिन रही। समय की गति के अनुकूल खाद्य पदार्थ मंहगे होने लगे। राज्य की ओर से लमान भी बढ़ा दिये गये। शाल आदि पर भी कर लगा दिये गये, जिससे धीरे–धीरे व्यवसाय को हानि होने लगी।..... लगान सम्बन्धी असन्तोष के कारण आधी से अधिक खेती नष्ट हो गयी, गॉव उजड़ गये। इस भयंकर स्थिति के बाद कुछ सुधार राज्य की ओर से किये गये। लगान निश्चित किया गया। आवागमन के मार्ग ठीक किये गये।[3]

हिमाचल का इतिहास एवं राजनीति :

"हिमाचल प्रदेश" का भू–भाग इतना बीहड़ और दुर्गम है कि किसी भी विजेता के इस पर अधिकार जमाये रखना टेड़ी खीर है। यही कारण है कि यहाँ कभी भी किसी बड़े साम्राज्य का प्रभुत्व देर तक नहीं रहा। यहाँ छोटी–छोटी रियासते थीं। छोटे–छोटे राजा अपने राज्यों के स्वामी थे। समय–समय पर आपस में झड़पें होती रहती थीं। मौका पाकर एक राजा दूसरे का प्रदेश छीन लेते थे। आजकल का कांगड़ा और कुल्लू प्राचीन काल का त्रिगर्त व

कुलूत राज्य था। कुछ का मत है कि कश्मीर से लेकर नैपाल तक सारा हिमालय ही किन्नर प्रदेश था। बाहर के विजेता यहाँ तक पहुंचे अवश्य और यहाँ के शान्तिप्रिय निवासियों को हरा भी दिया, किन्तु विजय उपयोग के लिये टिक नहीं पाये। महाप्रतापी गुप्त सम्राटों का प्रभाव वहाँ रहा था। 7वीं शताब्दी में हर्षवर्धन ने भी कॉगड़ा और कुल्लू को अपने साम्राज्य में मिला लिया था। चंगेज के सैनिक भी वहाँ कुछ दिन के लिये पहुंचे थे। 8वीं शताब्दी में चम्बा, लाहुल और रचीती कश्मीर के राजा ललितपीड मुक्तादित्य के अधीन रहे। इन दिनों लाहुल में बौद्ध–धर्म का प्रचार हुआ। किन्जौर और स्पीती में बौद्ध धर्म का प्रवेश इसके दो सौ वर्ष बाद हुआ। 19 वीं शताब्दी के मध्य में कश्मीर के सेनापति जोरावरसिंह ने लद्दाख को जीता और स्पीती का भाग अपने गुलाम रहीम खाँ को दे दिया। रहीम खाँ धर्मान्ध मुसलमान था। उसने बौद्ध विहारों, मन्दिरों को लूटा और तोड़ा। बुशहैर का राज्य कामरु के ठाकुरों ने स्थापित किया था। पहले राजधानी सराहन बनी पर 1554 ई. में राजा खैहरसिंह ने रामपुर को अपनी राजधानी बनाया। उसने सिरमौर गढ़वाल, सुकैत और मंडी के राजाओं को हराकर उनसे कर वसूल किया। मुगल सम्राट के अकबर ने मेहरसिंह को "छत्रपति" की उपाधि दी। 1803 से 1815 तक प्रयास कर गोरखा यहाँ रामपुर पहुँचे पर केवल, खजाना लूटने के इच्छुक होने के कारण : कामरु चले। छौलूट के पुल पर किनौर के सैनिकों ने छिपकर एकाएक गोरखों पर आक्रमण कर दिया। गोरखा हार कर भागे। सन् 1815 में अंग्रेजों का प्रभाव पड़ा। उनकी कूटनीति के कारण पर्वतीय राज्यों के शासकों की शक्ति सीमिल हो गई थी। 1815 में अंग्रेजों ने महेन्द्रसिंह को इस इलाके का राजा स्वीकार किया था पर इसके बदले राजा ने 15000 वार्षिक कर देना स्वीकार किया। 1850 में इसका पुत्र शामशेर सिंह गद्दी पर बैठा। 1857 के विद्रोह में भारतीय सेनाओं के प्रतिसहानुभूति रखने के कारण अंग्रेजों ने उसे हराने का प्रस्ताव किया पर क्रियान्वित न कर सके। शमशेर सिंह का बेटा रघुनाथ सिंह राजा बना। अधिकार सीमित हो चुके थे। रघुनाथसिंह आमोद–प्रमोद से मग्न रहता था। प्रजा की हालत बिगड़ती चली गई।" 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ तब हिमाचल प्रदेश शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योगों आदि की दृष्टि से भारत का सबसे पिछड़ा प्रदेश था।[3]

कुमाऊँ का इतिहास :

कुमाऊँ का पहला राजवंश कत्यूरी था। इसका शासनकाल 8वीं से 10 वीं शताब्दी तक रहा। इस वंश का सबसे वीर और विद्वान राजा रुद्रचन्द्र था। धीरे–धीरे चंद्रवंश का हास होने लगा। एक बार फिर कुमाऊँ का सारा ज्य फिर छोटे–छोटे राज्यों में छिन्न–भिन्न हो गया। 1790 में गोरखाओं ने कठोरता से शासन किया। इस नृशंसता की याद आज भी

कुमाऊनी लोग "गोदख्यानी" नाम से करते हैं।" 1815 में गोरखाओं से कुमाऊँ को अंग्रेजी सहायता से मुक्त कराया। एक यायावर लेखक के मतानुसार –

"गोरखाओं से 1815 ई. में फिर अंग्रेजी सहायता से मुक्त कराया गया, जिससे नैनीताल जनपद का समूचा क्षेत्र अंग्रेजों के अधीन रहा। अंग्रेजों का लालमण्डी किला जहाँ गोरखा और अंग्रेजी सैनिकों के बीच युद्ध हुआ था, अब भी जीर्ण–शीर्ण अवस्था में विद्यमान है।[4]

"अंग्रेजी राज्य की स्थापना कुमाऊँ में गोरखों अंग्रेजों के युद्ध में संधि के पश्चात हुई जिसका कार्यभार ई. गार्डनर ने अपने हाथ में लिया। अल्मोड़ा शहर पर अंग्रेजों का अधिकार हो जाने के पश्चात् गोरखों ने रामगंगा नदी के निकट पाली के नैयणा पर्वत और लोहवा गढ़वाल में जो उनके बड़े किले थे, खाली कर दिये। आज भी नैयणा पाली आदि स्थानों में उन किलों के खण्डहर विद्यमान हैं।"[5] 1981 तक कुमाऊँ कमिश्नरी, में कुमाऊँ, गढ़वाल और तराई के तीन जिले शामिल थे। उसके बाद कुमाऊँ को अल्मोड़ा और नैनीताल के दो जिलों में बॉटा गया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अंग्रेज लोग बड़े कुशल प्रशासक थे। उन्होंने अंग्रेजी राज्य की जड़ें कुमाऊँ में मजबूत की, इसके बारे में डॉ नोटियाल का मत है –

"उनको कुमाऊँ का बच्चा–बच्चा जानता था। वे यहाँ के लोगों से हिल–मिल गये थे। घर–घर की बातें जानते थे। पहाड़ी भी बोलते थे। किसानों के घर की मुंडवे की रोटी भी खा लेते थे।''[6]

सन् 1857 के गदर का प्रभाव कुमाऊँ पर कम ही पड़ा। किन्तु 19 वीं शताब्दी के

अन्तिम चरण में राष्ट्रीयता की लहर का पर्याप्त प्रभाव पड़ा और 1912 में यहाँ कांग्रेस की स्थापना हुई। राष्ट्रीय विचारों के प्रचार के लिये सन् 1913 में "अल्मोड़ा अखबार" नामक पत्र का प्रकाशन भी प्रारम्भ हुआ। कुली प्रथा के "विरुद्ध भी कुमाऊँ ने आवाज उठाई। विधान सभाओं और विधान परिषदों में भी कुमाऊँ को प्रतिनिधित्व मिलने लगा। प्रतिनिधियों में पं. गोविन्दवल्लभ पन्त, कूर्माचन–केसरी पं. बद्रीदत्त पाण्डेय, हरगोविन्द पंत, रामप्रसाद टामटा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। 1937 में कांग्रेस सरकार स्थापितं हाने पर पं. गोविन्दवल्लभ पंत ने बागडोर संभाली। कांग्रेस मजबूत हुई। राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेने के कारण अनेक नेता जेल भी गये।

स्वतन्त्रता पाने पर कुमाऊँ की उपत्याकाएँ महात्मा गान्धी तथा जवाहर लाल की .. जय–जयकार से गूंज उठी। शनैः शनैः राष्ट्रीय विकास की योजनाओं द्वारा कुमाऊँ भी प्रगति करने लगा।

PUNE RESEARCH WORLD ISSN 2455-359X
AN INTERNATIONAL JOURNAL OF INTERDISCIPLINARY STUDIES VOL 5, ISSUE 3

गढ़वाल मंडल का इतिहास :

अनेक यात्रा रचनाकारों ने हिमालय क्षेत्र के गढ़वाल मंडल के इतिहास पर अपनी रचनाओं में दृष्टिपात किया है। डॉ0 शिव प्रसाद डबराल गढ़वाली इतिहास को अपनी . रचना में बताते हैं–'यहाँ गुप्तवंश के सम्राटों ने छोटे–छोटे राज्य स्थापित कर लिए। गढ़वाल में उस समय नागवंशी राजाओं का प्रभाव बढ़ गया था। गोपेशवर और बाड़ाहट के त्रिशूलों पर उकेरे गए लेखों से विदित होता है कि उस समय स्कन्दनाग, विभुनाग, अशुनाग, मणपतिनाग (गणेश्वर नाग) और गुहनाग नामक नाग राजा शासन कर रहे थे। देहरादून के जौनसार भावर स्थित लाखामंडल से प्राप्त एक शिला लेख से यह ज्ञान होता है कि यमुना उपत्यका में यादवों का राज्य था। यह शिलालेख राजकुमार ईश्वरा का है जिससे उसके पितृवंश के 12 नरेशों के शासन का विवरण मिलता है। इनका राज्यकाल 460 से 635 ई0 तक माना जाता है।

"सन् 1606 ई. में स्थायीश्वर के सम्राट हर्ष ने मौखरि राज्य को अपने आधीन कर . लिया। सारा कुमाऊँ–गढ़वाल का क्षेत्र हर्ष के अधिकार में आ गया। हर्ष की मृत्यु के बाद पुनः स्थानीय शासक स्वतंत्र हो गये। उस समय कुमाऊँ–गढ़वाल बहनफुट कहा जाता था। उस पर पौख राजाओं का शासन था। सोमपंक्षी पौख नरेशों के विष्णुदर्शन, वृषवर्मन, अग्नि वर्मन, धुनिवर्मम और विष्णु वर्मन द्वितीय पाँच राजा हुये जिनका राज्यकाल सन् 640 से सन् 725 तक माना जाता है।"[7]

सन् 740 ई. से सन् 1000 ई. तक गढ़वाल–कुमाऊँ पर कत्यूरवंश के तीन परिवारों का एक छत्र शासन रहा। पांडुकेश्वर और बागेश्वर में जिन अभिलेखों को प्राप्त किया गया है इनके आधार पर कत्यूरी राजाओं के नाम बसन्तम्, खार्पर, अचिधज, त्रिभुवनराज, निम्बर, इष्टगण, ललितभूर, सलोपादित्य, इच्छट, देशट, पक्षट और सुमिशराज थे। इनका राज्य हिमालय से तराई भावर तक था। बैजनाथ के कत्यूरी, जोशीमठ के कत्यूरी राजाओं के समान पराक्रमी नहीं थे। एक छत्र शासन न रख सके। गढ़वाल–कुमाऊँ में पुनः छोटे–छोटे ठकुराईयों का राज्य हो गया। कतूरी शासकों ने शंकराचार्य की शिक्षाओं का पूरा–पूरा पालन किया! सन् 700 ई0 से 888 तक गढ़वाल में कई छोटे–छोटे राज्य अस्तित्व में आ गये।

"बाहरी आक्रमण से पराजित हुये राजा या कुहर धार्मिक भावना से लोग केदार खंड अर्थात् गढ़वाल–कुमाऊँ की ओर आ गये। नदी शताब्दी तक कई गढ़ों पर कई राजाओं का राज हो गया। चौहान राजपूतों का ज्वालापुर घट, रतनगढ़, उपूगढ़, सोहवा, चांदपुरगढ़, रैका–रमोली और पूवी पठार (सौरला) पर अधिक था।"[8]

सन् 19 में मुहम्मद गौरी ने पृथ्वीराज चौहान को हटाकर सारे उत्तर भारत को अपने अधिकार में ले लिया। हिन्दुओं ने धर्म रक्षा के लिये गढ़वाल कुमाऊँ को पहाड़ियों में शरण ली। गढ़वाल से राजाओं ने हमेशा मुसलमान राजाओं से भिडन्त की। 1398 ई. में तैमूरलंग को बच्छराज (वत्सराज) गढ़वाली राजा ने मोहन धारे पर रोक दिया। तैमूर ने स्वयं अपनी में राजा की प्रशंसा की है। उसी समय गढ़वाली राजा रतनसैन ने तैमूरलंग को कालेसा के पास रोका था। मुसलमानी आक्रमण के साथ गढ़वाल–कुमाऊँ ने गुर्जर–प्रतिहारों, चौहानों और पंकर आदि राजपूतों का उदय हुआ। पंडित हरिकृष्ण रतूडी भी इस लक्ष्य को स्वीकारते हैं कि –

"पंबार वंश का धारा नगर (गुजरात) निवासी राजकुमार कनकपाल सन् 612 ई. में चांदपुर गढ़ में आया था।.....भानुप्रताप (चाँदपुर गढ़ी का राजा) ने अपनी छोटी पुत्री का विवाह कर दिया और कुछ समय पश्चात् उसे अपनी राजगद्दी भी दे दी। वही पंवार वंश का मूल पुरुष माना जाता है।[9]"

गढ़वाल की सीमा निर्धारण अजयपाल ने की। फिर सहजपाल, बलराम (बहादुरशाह), मानशाह, सामशाह, दूलोराम शाह और महियत शाह का राज्य संघर्ष पूर्ण रहा। कलूरी काल से ही तिब्बत से संघर्ष शुरु हो गया। मानशाह ने तिब्बत के दापा राजा को परास्त किया।

"महापत शाह का अधिकांश समय गढ़वाल की सीमाओं की सुरक्षा करने में ही व्यतीत हुआ। उसकी मृत्यु पर उसकी पत्नी सगावती ने शासन की बागडोर संभाली। यह रानी इतिहास में "नाक काटी–राणी" के नाम से विख्यात है। इस रानी के शासनकाल में शाहजहाँ के सेनानायक नजावत खाँ ने देहरादून पर अधिकार कर लिया, परन्तु रानी के सैनिकों ने उन्हें नाक–कान काट कर भगा दिया।[10] तभी से रानी को "नाक काटी राणी" नाम मिला।

पृथ्वीपति शाह के दरबार में सुलेमान शुकोह ने शरण लिया। शुकोह को वापिस करना पड़ा। मैदनीशाह की मृत्यु हो गई। पृथ्वीपति शाह ने फतेहशाह को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। फतेहशाह की राजधानी श्रीनगर थी। ये गढ़वाल के एक मात्र महाराज थे। सिक्ख गुरु गोविन्द सिंह से फतेहशाह का युत्र हुआ था। फतेहशाह के पुत्र उपेन्द्रशाह ने केवल आठ माह तक शासन किया। उसकी मृत्यु हो गई। पुत्र प्रदीपशाह केवल 5 वर्ष का था अतः उसकी माता ने राज्य संचालन किया।

सन् 1742 ई० में रोहिला सरदाररहमन खॉ (अली मुहम्मद खाँ) ने कुमाऊँ पर अपना अधिकार कर लिया। कुमाऊँ का राजा कल्याण चंद भाग कर गढ़वाल आया। प्रदीपशाह ने

आश्रय दिया। रोहिलों को जहरा सके। तीन लाख रुपये देकर कुमाऊँ की सीमा से बाहर किया।

सन् 1777 ई. में मोहन चंद ने कुमाऊँ पर अधिकार किया। सन् 1779 ई. में । गढ़वाली सेना ने मोहनचंद की सेना को बगवाली पोखर की लड़ाई में परास्त किया।

सन् 1780 ई. में ललित शाह की मृत्यु पर ज्येष्ठ पुत्र जयकार्विशाह गढ़वाल राज्य गद्दी पर बैठा। पर आन्तरिक षडयंत्र के कारण पलायन कर गया। मोहन चंद ने पुनः कुमाऊँ पर अधिकार कर लिया। सन् 1790 ई. में भीषण अन्तकाल पड़ा। सन् 1803 ई. की भाद्रपद की अनंत चतुर्दशी की आधी रात से सात दिन तक भूकम्प और मूसलाधार वर्षा होती रही। इसी कारण गोरखा गढ़वाल में आने में सफल रहे। कुमाऊँ की तरह गढ़वालियों ने आत्मसमर्पण नहीं किया। सन् 1804 से 1815 तक गढ़वाल में गोरखयाणी रही। 1815 में अंग्रेजों ने गढ़वाल गोरखाओं से हस्तगत किया।

"भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई में गढ़वालियों ने विशेष योग दिया। 1930 में पेशावर में श्री चन्द्रसिंह गढ़वाली के नेतृत्व में गढ़वाली सैनिकों ने अपने भाईयों पर गोली चलाने से इन्कार कर दिया था। इधर गाँधी सेना में कई लोग सक्रिय भाग ले रहे थे। नेता जी की आजाद हिन्दफौज में भी गढ़वाली ही थे।"

सन् 1949 में टिहरी गढ़वाल को एक जिले के रूप में मिला लिया गया। चीन के आक्रमण के बाद भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार ने सीमान्त महत्ता को समझा। सन् 1962 में टिहरी गढ़वाल, अल्मोड़ा और पौढ़ी गढ़वाल जिले दो–दो जिलों में विभाजित किया गया। अल्मोड़ा, पिथौरा गढ़ (अल्मोड़ा से) टिहरी गढ़वाल, उत्तरकाशी (टिहरी गढ़वाल से) और चमोली, पौढ़ी गढ़वाल (पौढ़ी गढ़वाल से) नये जिले बने।

1 जनवरी 1970 में चमोली, उत्तरकाशी, टिरी गढ़वाल और पौढ़ी गढ़वाल जिलों को मिलाकर गढ़वाल मंडल का निर्माण किया गया। 1975 में देहरादून भी गढ़वाल मंडल में आ गया।

अतः गढ़वाल समस्त भारत के धार्मिक विचारों का केन्द्र रहा और अब तक है जिसके कारण इस क्षेत्र में समस्त भारत का आना–जाना युग–युगों से रहा। हर तरह की लोकसंस्कृति गढ़वाल में वहाँ के लोगों के साथ आयी और यहाँ की संस्कृति भारत के विभिन्न क्षेत्रों में गई, जिसके कारण गढ़वाल से समस्त भारत अपने छोटे रूप में समा गया है।[11]

वर्तमान स्थिति :

"आज उत्तराखण्ड, समस्त भारत का प्रामाणिक लघु संस्कता है। आज तीर्थ यात्रा का एक पर्यटन के स्वरूप में शीघ्रता से परिवर्तित होती जा रही है। तब भी इसका पावन उत्तराखण्डीय स्वरुप इसके शिखरों, हिमनदों, सप्त कुंडों। प्रपातों मनोरम बुग्यालों एवं सघन क्षेत्र तथा देवदार वनों के कारण उसी आकर्षक रूप में शोभायमान है।"

उत्तरांचल राज्य के निर्माण के लिये वर्तमान में कुछ आन्दोलन चल रहे हैं। इन आन्दोलनों को राजनैतिक सहयोग भी प्राप्त है। भाजपा अध्यक्ष लाल कृष्ण ने, 8 मार्च 1939 के दैनिक पत्र "आज" के अनुसार राष्ट्रपति रामास्वामी वेंकटरमन को एक ज्ञापन दिया है। उसमें उल्लेख किया गया है कि –

सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इस क्षेत्र के विकास पर उत्तर प्रदेश सरकार समुचित ध्यान नहीं दे रही है। इस कारण यह क्षेत्र न सिर्फ बुरी तरह पिछड़ा ही है बल्कि यहाँ से नौकरी की तलाश में नौजवान और भूतपूर्व सैनिक मैदानी इलाके में जा रहे हैं ऐसी स्थिति में.... अनुरोध है कि वे संविधान के अनुच्छेद तीन के तहत उत्तरांचल राज्य के निर्माण का निर्देश केन्द्र सरकार को दे।.....इससे इस पर्वतीय क्षेत्र का समुचित विकास हो सकेगा।'[12]

उत्तराखण्ड प्रगतिशील युवा मंच ने भी यू. पी. निवास में एक दिन का धरना दिया।

धीरे–धीरे यह उत्तराखण्ड राज्य निर्माण का आन्दोलन जोर पकड़ रहा है। वास्तविकता तो यह है कि पर्वत हमारे लिये कितने उपयोगी हैं इस तथ्य को जानते हुये भी, उनकी उन्नति, विकास के लिये समुचित कदम नहीं उठाये जा रहे हैं। दूसरी ओर वनों को काटकर हम केवल पर्वतों के सौन्दर्य को ही कम नहीं कर रहे हैं बल्कि दूषित पर्यावरण को समाप्त करने के प्राकृतिक उपाय को समाप्त करने की ओर कदम बढ़ा रहे हैं। वर्षा के लिये पर्वतीय वनों की उपयोगिता को भूला नहीं जा सकता है। इसी कारण सुन्दर लाल बहुगुणा ने "चिपको आन्दोलन" का सहारा लिया है। वह इस प्राकृतिक सम्पदा को बचाने के लिये सतत प्रयत्नशील हैं। वन सम्पदा का विनाश करके हम स्वयं के पैर में कुल्हाड़ी मार रहे हैं। देश में जल की आपूर्ति के लिये, पर्वतों का ही सहारा लिया जाता है।

जल लाने वाली नदियाँ जो पर्वतों से सतत् रूप में अविचरल रूप में बहती रहती हैं उनकी सफाई, रख–रखाव भी हम नहीं कर पा रहे हैं। उनकी सफाई को भी राजनैतिक रुप दिया जा रहा है।

गढ़वाल क्षेत्र भी आधुनिक राजनीति से अछूता नहीं है। दुर्गा प्रसाद नौटियाल अपने लेख में निर्वाचल के बारे में लिखते हैं कि –

आम मतदाता राजनीति से उदासीन है.....उनके लिये चुनाव तमाशा जैसा है। राजनीति के प्रति व्याप्त निराशा वहाँ के निवासी के मनोभावों को समझने के लिये पर्याप्त है। पच्छमी गढ़वाल के बांगन क्षेत्र के निवासियों के बारे में जरमन भाषा विज्ञानी डॉ० क्लाउस पेटर का मत है कि –

"बांगन क्षेत्र के निवासी आज भी बोलचाल में उन संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते हैं, जिनके बारे में यह विश्वास किया जाता है कि सदियों पहले प्रचलन से बाहर हो, विलुप्त हो चुके हैं।"

कुमाऊँ में पंचायती राज्य की स्थापना, नव निर्माण के कार्यों ने कुमाऊँ को चहुंमुखी विकास का अवसर दिया है।

पर्वतीय क्षेत्र के अधिकांश क्षेत्रों में, प्रशासन–व्यवस्था सामान्य है। मैदानी क्षेत्र की अपेक्षा यहाँ चोरी, डकैती की घटनायें बहुत कम होती हैं। केवल वे ही व्यक्ति जो कि मैदानी क्षेत्र में होकर आते हैं, ऐसी गतिविधियों में लिप्त पाये जाते हैं।

संग्रहालय :

श्री गोपाल नेवटिया ने अपनी कश्मीर यात्रा के प्रसंग में श्रीनगर के संग्रहालय का विस्तार से वर्णन किया है। इससे यहाँ की ऐतिहासिक जानकारी पाठकों के समक्ष आती हैं।

श्रीनगर के प्रताप "संग्रहालय" में अनेक भग्न मूर्ति संग्रहीत हैं। "विष्णु मूर्ति. श्रीनगर के श्रीप्रताप संग्रहालय में संगृहीत हैं, जो अवन्ती के भग्न मन्दिरों से प्राप्त की गई हैं। उसमें विष्णु के तीन मुख बनाये गये हैं, चौथा मुख पीछे की ओर साधारण रेखाओं के द्वारा अंकित है। सामने का चेहरा पुरुष का है और दो चेहरों में एक सिंह का और दूसरा एक अन्य पशु का है। पीछे का चेहरा दानव का सा है। ऐसी ही एक और मूर्ति पाई गई थी। वह संग्रहालय में तो संगृहीत नहीं है, पर उसका विवरण प्राप्य है।....शिव और विष्णु की और बहुत सी मूर्तियों अवन्तीपुर में प्रान्त हुई हैं और कुछ अब भी उन भग्नावशेषों की दीवाली में ज्यों की त्यों लगी हैं।....परिहासपुर की तीन चार मूर्तियाँ श्री प्रताप संग्रहालय में संगृहीत हैं।''26 राज्य का वृहत संग्रहालय जम्मू में है। लाहुल–स्पीती और किन्नौर के बौद्ध विहारों में भित्ति चित्र व चूना पुते कागजों परबने चित्र संग्रहीत हैं। जो कि वहाँ की उस समय की संस्कृति, कला एवं शैलियों का परिचय देते हैं।

"बौद्ध विहारों में भी बहुत से प्राचीन चित्र हैं। इनमें भित्ति चित्रों के अलावा चूना पुते कागज पर बने बहुत से चित्र भी हैं। जो पीछे कपड़ा लगाकर बक्सों की तरह लपेट कर

रखे गये हैं।.....इनमें भगवान बुद्ध के जीवन के और साधना के दृश्य चित्रित किये गये हैं।[13]

"अल्मोड़ा" में भी राजकीय संग्रहालय और कला भवन हैं। कला प्रेमियों तथा इतिहास एवं पुरातत्व के जिज्ञासुओं के लिये यहाँ पर्याप्त सामग्री है।' '

अल्मोड़ा से 71 किलोमीटर दूर बैजनाथ मन्दिरों में बहुत कला पूर्ण मूर्तियाँ हैं। कत्यूरी वंश की कला–प्रेमी भावना का सच्चा प्रमाण बैजनाथ की मूर्तियों में मिलता है।

"पुरातत्व के शोधार्थियों के लिये यहाँ पर्याप्त सामग्री विद्यमान हैं।" जोगेश्वर के मन्दिर एवं प्राप्त पुरातन भग्नावशेष के बारे में लेखक का निम्नाकिंत कथन द्रष्टव्य है –

"यहाँ पर पुरातत्व विभाग ने मूर्तियों के रख–रखाव का प्रबन्ध कर लिया है। कहते हैं, कुछ महत्वपूर्ण मूर्तियों को अल्मोड़ा के राजकीय संग्रहालय में ले जाया गया है।''[14]

विदेशों का इतिहास :

अनेक यात्रा रचनाकारों ने विदेशों की यात्रा प्रसंग में वहाँ के ऐतिहासिक तथ्यों पर प्रकाश डाला है। कतिपय रचनाओं में ऐतिहासिक तथ्यों को इस प्रकार देखा जा सकता

"तिब्बत में संस्कृति का विशेष प्रचार–प्रसार 7वीं सदी में हुआ, जबकि निम्न ब्रह्मपुत्र वाले तिब्बती भाग (ल्हो–खा) के एक सामन्त के पुत्र स्रोड्. गचन्–सगम्–पो (630–660 ई0) ने एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की।"

प्राचीन बौद्ध मठों ने तिब्बत के सांस्कृतिक जीवन को सर्वाधिक प्रभावित किया .' है। रा–लुड्. "नाम एक प्रसिद्ध मठा का ऐतिहासिक वर्णन देखिए

"इस मठ को तरेहवीं सदी के आरम्भ में पोन्–रस्–धर्म–र्दो–सेड. (1177–1236 ई०) ने स्थापित किया था। इसका सम्बन्ध विक्रमशिला के नाडपाद के शिष्य र्म–वाके र्क–युद्–पा सम्प्रदाय से है.....मठ पहाड़ के मैदान में है। इस मठ की विशेषता यह है कि –

यहाँ भिक्षु और भिक्षुणियाँ दोनों एक साथ रहते हैं और दोनों अधिकतर इसी मठ में ... पैदा हुए हैं। कौन किसका पुरुष है और कौन किसकी स्त्री, इसका कोई कड़ा नियम नहीं है।''[15]

ईरान के प्राचीन ऐतिहासिक अग्नि कुण्डों और वहाँ के निवासियों के अग्नि पूजक होने की ऐतिहासिक चर्चा करते हुए महेश प्रसाद लिखते हैं– .

"प्राचीन ईरान निवासी अग्नि की उपासना अपना परम धर्म समझते थे। इसी विचार को सम्मुख रखकर फरे, नामी बादशाह के समय के अग्निकुण्डों का श्रीगणेश हुआ। यह

बादशाह ईरान में विक्रमी सम्वत् से बहुत वर्षों पहले हुआ था। सबसे पहले इसने खुरासान में एक अग्निकुण्ड बनवाया। इसके बाद सजिस्तान और अन्य स्थानों में ये कुंड बनाये गये।"[16]

"नवबहार बलख नगर का सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक अग्निकुण्ड है। प्रसिद्ध इतिहासकार एवं यात्रावृत्त लेखक भगवतशरण उपाध्याय ने अपने यात्रावृत्त में भूमध्य सागर के तट पर जन्मी अनेक प्राचीन सभ्यताओं की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत की है।[17] साथ ही अनेक प्राचीन जातियों के विकासात्मक इतिहास को भी पाठकों के सामने रखा है।[18]

चीन : 1644 ई. से लेकर आज साम्यवादी शासन व्यवस्था स्थापित होने तक के चीनी इतिहास को राहुल जी ने सुन्दर शब्दों में प्रस्तुत किया है। – इसी प्रकार जापान, इटली, अमेरिका, चैकोस्लोवाकिया, और इंगलैण्ड आदि विविध देशों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की चर्चा विविध संदर्भो से यात्रा–साहित्य में उपलब्ध होती है।

राजनीति : तिब्बत–"तिब्बत में हर गाँव में "मुखिया (गोवा) होते हैं। इनके ऊपर इलाके–इलाके का जोड्. पोन (जिला–अफसर) होता है। जोड्. का अर्थ किला है, और पोन् का अर्थ–अफसर"। जोड़ अधिकतर पहाड़ की छोटी "टेकरी' पर बने हैं।.....प्रदेश के छोटे–बड़े होने के अनुसार जोड्. पोन् का दर्जा छोटा–बड़ा होता है। हर जोड्. मं दो जोड्. पोन् होते हैं.....जोड़ पोन् के ऊपर दलाई लामा की गवर्नमेंट का ही . अधिकार है। न्याय और व्यवस्था दोनों में ही जोड़ पोन् का अधिकार बहुत है।'

अफगानिस्तान : यहाँ की शासन व्यवस्था के सम्बन्ध में शौकत उस्मानी लिखते हैं– "अफगानिस्तान में जागीरदारी का नाम तक नहीं है और देश का शासन मिर्जा और सूबेदारों के जरिए होता है। इनको अमीर ही नियुक्त किया करते हैं। और इन्हीं पर शासन की जिम्मेदारी होती है।''[19] रुस में–'गॉव की सोवियत का चुनाव एक आम सभा में हाथ उठाकर किया जाता है। एक खास उम्र के ऊपर के ग्राम निवासी सभी स्त्री–पुरुषों को इस सभा में उपस्थित होने और मत देने का अधिकार है.....गॉव की सब सार्वजनिक संस्थाएँ तथा कारखाने सीधे अपने प्रतिनिधि भेज सकते हैं।"

सोवियत में अदालतें तीन प्रकार की होती हैं। "पीपल्स कोर्ट" दूसरी टैरीटोरियल या रीजियोनल कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट। पीपल्स कोर्ट भिन्न–भिन्न क्षेत्रों के लिए सुविधानुसार एक नगर में भी बहुत से रहते हैं। साधारणतः सभी मामलों का निर्णय पीपल्स कोर्ट में ही होता है। टैटीटोरियल या रीजियोजल कोर्ट में सरकार से सम्बन्ध रखने वाले गम्भीर मामलों

पर विचार होता है। इन दोनों अदालतों के मामलों पर पुनः विचार की आवश्यकता " हो तो सुप्रीम कोर्ट करता है।

स्विटजरलैण्ड की सैन्य–व्यवस्था के सम्बन्ध में अज्ञेय ने कहा है –

"देश के सभी वयस्कों को थोड़े दिन की अनिवार्य सैनिक शिक्षा देनी पड़ती है–पहली बार पैतालीस दिन, उसके बाद हर ऑतर वर्ष सोलह दिन और फिर हर चौथे वर्ष नौ दिन के लिए.....सेना में सम्पूर्ण लोकतंत्रीय व्यवहार होता है। छोटे बड़े का भेद नहीं माना जाता है.....

आज की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में युद्ध एक भयंकर समस्या बन गया है। इस सम्बन्ध में सेठ गोविन्ददास का कथन है कि –

"युद्ध की विभीषिका मानव जाति को निगल जाना चाहती है। सभी राष्ट्र फिर से युद्ध की तैयारी में लग गये हैं और शत्रुता भयानक रूप धारण कर रही है। आक्रमण और जन संहार की कला में स्पर्धा हो रही है।

पिछले विश्वयुद्ध के भयंकर परिणामों पर भी यात्रा–साहित्य में दृष्टिपात किया गया है। इसी प्रकार जापान का ग्राम संगठन, इंगलैण्ड की न्याय व्यवस्था और अमरीकी–शासन प्रणाली आदि के वर्णनों में हिन्दी यात्रा–साहित्य में बिखरे विदेशी राजनैतिक सन्दर्भो को तलाश जा सकता है। ये सभी राजनैतिक सन्दर्भ उन देशों की संस्कृति को समझने में सहायक हैं।

सन्दर्भ सूची :–

1. मुनि कान्ति सागर–"खण्डहरों के वैभव में", पृ.–ग्रन्थ ..
2. राहुल–यात्रा के पन्ने, पृ. 367
3. राहुल–यात्रा के पन्ने, पृ. 379
4. राहुल–हिमालय परिचय, पृ. 423
5. अज्ञेय–अरे यायावर रहेगा याद, पृ. 37
6. वही, पृ. 36–37 7. गोपाल नवेटिया–काश्मीर, पृ. 110
8. वही, पृ. 111
9. गोपाल नवेटिया–काश्मीर, पृ. 115–116
10. गोपाल नवेटिया–काश्मीर, पृ. 117
11. गोपाल नवेटिया–काश्मीर, पृ. 120
12. प्रणव चक्रवर्ती एवं विराज–हिमाचल प्रदेश, पृ. 77

13. हंसराज दर्शक–कुमाऊँ एक स्वर्ग, पृ. 42
14. डॉ. नोटियाल–कुमाऊँ,–दर्शन, पृ. 28
15. डॉ. शिवानन्द नौटियाल–कुमाऊँ दर्शन, पृ0 28
16. डॉ. शिव प्रसाद डबराल–केदार खंड गढ़वाल मंडल, पृ. 41
17. डॉ. शिव प्रसाद डबराल–उत्तराखंड का इतिहास (4) पृ. 84–90
18. पं. हरिकृष्ण रतूडी–गढ़वाल का इतिहास, पृ. 353
19. मआसिद–उल–उमरा जि. पृ. 494
20. डॉ. शिवानन्द नौटियाल–गढ़वाल,–दर्शन, पृ. 38
21. वही, पृ. 39–40 22. डॉ. शिवप्रसाद नैथानी एवं डॉ. हरिमोहन–उत्तराखंड संस्कृ ति, साहित्य और पर्यटन, पृ. 13
23. दैनिक समाचार पत्र "आज" 8 मार्च, 1989, पृ.1।
24. दुर्गा प्रसाद नौटियाल–साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 6 जनवरी 1980, पृ. 48
25. डॉ. क्लाउस पेटर–वे सजाये हैं प्राचीन परम्परा, पृ. 109
26. गोपाल नवेटिया–काश्मीर, पृ. 103 .
27. प्रणव चक्रवर्ती–हिमाचल प्रदेश, पृ. 87
28. डॉ. शिवानन्द नोटियाल–कुमाऊँ दर्शन, पृ0 79
29. डॉ. शिवानन्द नोटियाल–कुमाऊँ दर्शन, पृ. 95